१४ जून २०२०

आज से वेदांत दर्शन पर लिखना प्रारम्भ कर रहा हूँ , आप सब से निवेदन है, भारतीय होने का गर्व है टौ इस श्रृंखला को अवश्य पढियेगा, और आपके विचारों से अवगत भी कराइयेगा

वेदांत दर्शन

भाग 1

विश्व में बहुत से दर्शन उपलब्ध हैं, परन्तु जितने भारत भूमि से निकले हैं उतने शायद ही कहीं से निकले हों, कारण स्पष्ट है कि भारत भूमि चिंतन की उर्वरा रही है, भारत के प्रमुख दर्शनों में अवैदिक दर्शन जैसे बौद्ध दर्शन एवं जैन दर्शन हैं वहीँ वैदिक दर्शन में मुख्य छ दर्शन हैं, 1. न्याय दर्शन २. वैशेषिक दर्शन ३. सांख्य दर्शन ४. योग दर्शन ५. मीमांसा दर्शन ५. वेदांत दर्शन.
विश्व में शायद भारत ही एक मात्र देश है जो अपने दर्शन के महत्व से मृत्यु को स्वीकृति भाव से लेता है, अन्य किसी भी दर्शन या पंथ में यह मज़बूरी है, हमारे शास्त्रों में विधान है की मृत्यु आत्मा का एक चोले से दुसरे चोले में जाने का नाम मात्र है, अतः इसे हर्ष से ग्रहण करते हैं. मुझे आदिशंकराचार्य की लिखी चर्पट पंजरिका का एक श्लोक याद आता है,
पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनम् ।
इह संसारे बहुदुस्तारे कृपयाऽपारे पाहि मुरारे ॥
फिर से जनमन फिर से मरणन | बार बार गर्भ माँ का धरणन ||
कितना कठिन पार है करना | मुरारी तुही किरपा रखना ||

अर्थ स्पष्ट है, की हम पुनर्जन्म मानते हैं एवं इस बार बार जन्म मृत्यु के फँदे से बाहर होना चाहते हैं, श्रीमद भगवत में परीक्षित अपनी मृत्यु का स्वागत करता है क्यूंकि वह जनता है की इस भौतिक संसार में सब कुछ अनिश्चित है मात्र मृत्यु ही निश्चित है एवं जो निश्चित है उसका क्या दुःख करना उसका तो हमें हर्ष से स्वागत करना चाहिए, जैन धर्म में भी मृत्यु को सहर्ष गले लगाने की प्रथा है जिसे वे संथारा कहते हैं, बौद्ध दर्शन में निर्वाण कहते हैं. पाश्चत्य दर्शन में इच्छा से मृत्यु अपनाते हैं उसे एथुनेसिया कहते हैं परन्तु यह मज़बूरी में की जाती हैं. इसे वे सहर्ष नही स्वीकारते. हाँ अब कुछ जिहादी स्वेच्छा से आतंक हेतु अपने को मरते हैं पर इसे स्वीकृति भाव तो कहेंगे पर सहर्ष नही कहेंगे.

वेदांत दर्शन जो की ब्रह्म सूत्र कहलाता है यह वेदों के अंत में लिखी समीक्षा है इस दर्शन को उत्तर मीमांसा भी कहते हैं। इस दर्शन के अनुसार ब्रह्म जगत का कर्ता-धर्ता व संहार कर्ता होने से जगत का निमित्त कारण है। उपादान अथवा अभिन्न कारण नहीं। ब्रह्म सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, आनंदमय, नित्य, अनादि, अनंतादि गुण विशिष्ट शाश्वत सत्ता है। साथ ही जन्म मरण आदि क्लेशों से रहित और निराकार भी है। इस दर्शन के प्रथम सूत्र `अथातो ब्रह्म जिज्ञासा´ से ही स्पष्ट होता है कि जिसे जानने की इच्छा है, वह ब्रह्म से भिन्न है, अन्यथा स्वयं को ही जानने की इच्छा कैसे हो सकती है। और यह सर्वविदित है कि जीवात्मा हमेशा से ही अपने दुखों से मुक्ति का उपाय करती रही है। परंतु ब्रह्म का गुण इससे भिन्न है।

भारतीय दर्शन जीवन मृत्यु की जितनी सुन्दर विवेचना करते हैं वह अति दुर्लभ है, मृत्यु से अनजान

मनुष्य ही सब दुखों को पाता है, जिसने मृत्यु को जान लिया वह निर्भय हो गया.

---

१७ जून २०२०

वेदांत दर्शन

भाग-2

आईये हम देखते हैं वेदांत है क्या, वेदांत समझने से पहले हमें वेदों की प्रारंभिक जानकारी होनी चाहिए, वेदों से विस्तृत परिचय मेरी अन्य पुस्तक " वैदिक सनातन धर्म - वेदों का संक्षिप्त परिचय" में है उसे बाद में जानेंगे । वेदांत वेदों के अंत में लिखे गए वेद के निचोड़ हैं जिसे उपनिषद भी कहते हैं, उपनिषद इस लिए कहते हैं क्योंकि गुरु के निकट उनके चरणों पर बैठ कर ही ज्ञान लिया जा सकता है।वेद के चार प्रमुख भाग हैं इन चार भागों से ही वेद पूर्ण माने जाते हैं ऐसी मान्यता है। मेरी मान्यता कुछ अलग है वह संदर्भ आने पर कहूंगा, ये चार भाग हैं, ब्रह्मण, अरण्यक, संहिता, उपनिषद। संहिता मूल वेद हैं, उपनिषद वेदों के अंत में समीक्षा है अतः इसे वेदांत भी कहते हैं , ब्रह्मणमें वेदपाठ की विधि बताई गयी है अतः यह कर्म कांड है और अरण्यक , वन को कहते हैं जो पाठ वनों में या वनों के सानिध्य में हो उसे अरण्यक कहते हैं इनमें उपनिषद और यज्ञ विधि भी है।
मुख्यतः 108 उपनिषद हैं जिनमे 11 उपनिषदों को मुख्य उपनिषद कहते है । विस्तार से विवरण मेरी

पुस्तक "वेद से वेदांत तक" में है जिसमे 9 मुख्य उपनिषदों का संस्कृत मूल पाठ और काव्यत्मक अनुवाद है साथ ही पुरुष सूक्त एवं नासदिकीय सूक्त का छंद बद्ध अनुवाद है।
डॉ राधाकृष्णन ने वेदांत के बारे में बड़ी अच्छी बात कही है ,जहाँ सब ज्ञान समाप्त हो जाए वहां वेदांत है। वेद संस्कृत में ज्ञान को कहते हैं अतः ज्ञान के अंत को वेदांत कहते हैं अर्थार्थ वेदांत के बाद कोई ज्ञान नहीं रह जाता जानने के लिए, यह सर्वोपरि और सुप्रीम ज्ञान है।
इस वेदांत में जो सिद्धांत उधृत है वे ही वेदांत दर्शन है ,जैसा की पिछली कड़ी में बताया कि वैदिक सनातन दर्शन के छः दर्शनों में अंतिम दर्शन है वेदांत दर्शन ,इसे उत्तर मीमांसा भी कहते हैं। उत्तर इस लिए कि वेदों के उत्तर में है और पूर्व मीमांसा जो पहले बताई गयी।
हमारे शास्त्रों में 8 व्यक्ति को अमर बताया गया है जिनकी मृत्यु कभी नहीं होती, उनमे वेदव्यास भी एक हैं, मेरी अवधारणा है उन्हें अमर इस लिए कहा गया कि यह एक सतत चलने वाली लेखकीय प्रथा है जो वैदिक ज्ञान को प्रवाहित करती रहेगी अतः यह लेखकीय प्रथा कभी मर नहीं सकती इस लिए अमर कह दिया गया परंतु आम व्यक्ति यही समझता है कि वेदों की रचना करने वाले वेदव्यास ही हज़ारों वर्षों बाद महाभारत और भागवत की भी रचना की थी। नहीं मेरा स्पष्ट मानना है यह सत्य नहीं है यह एक प्रथा है जो लेखक की गद्दी पर बैठे व्यक्ति को दी जाती है आज भी पौराणिक या वैदिक कथा करने की पीठ को व्यास पीठ ही कहा जाता है।
वेदों के संदर्भ में शोधकारों ने देखा है।सिर्फ वेदों के

संदर्भ में 28 वेदव्यास हुए थे, अर्थात् 28 बार वेदों का संकलन हुआ। कई बार वेद लुप्त भी हुए हैं। उनका हयग्रीव, वराह तथा मत्स्य अवतारों द्वारा उद्धार भी हुआ है।

ऋक् वेद की सभी 21 संहितायें ऋक् वेद हैं। उनमें अभी 3 उपलब्ध हैं-शाकल्य, वाष्कल, शांख्यायन। इसी प्रकार यजुर्वेद की सभी 101 शाखायें यजुर्वेद हैं। शुक्ल की 2 तथा कृष्ण की 4 शाखा उपलब्ध हैं-काण्व, माध्यन्दिन, तैत्तिरीय, मैत्रायणी, काठक, कपिष्ठल। सामवेद की आकाश(स्मृति) में 1000 तथा शब्द रूप में 13 शाखा हैं जिनमें 3 उपलब्ध हैं-कौथुमी, जैमिनीय, राणायनीय। अथर्ववेद की आकाश में 50 तथा शब्द रूप में 9 शाखा हैं जिनमें 2 उपलब्ध हैं-शौनक, पैप्पलाद।

वेद मन्त्र समझने लायक, भाषा, व्याकरण, छन्द, निरुक्त, ज्योतिष, कल्प, शिक्षा का जब तक विकास नहीं हो तब तक किसी भी मनुष्य को तथाकथित ईश्वर वेद नहीं दे सकता।

इसमें प्रत्येक मन्त्र में ऋषि के उल्लेख से ही स्पष्ट है कि भिन्न भिन्न स्थान और काल के ऋषियों को मन्त्र का दर्शन हुआ था। इनका संकलन 28 बार 28 अलग अलग व्यासों द्वारा हुआ है।

ब्रह्म के कई स्तर हैं। परात्पर में निर्विशेष या सविशेष द्वारा कोई मन्त्र नहीं दिया जा सकता। ईश्वर रूप सभी प्राणियों के हृदय में रह कर नियन्त्रण करता है (गीता, 18/61)। उसकी प्रेरणा से अनुभव हो सकता है। वह परा वाणी के स्तर पर होगा। उसको पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी के स्तर पर व्यक्त करना मनुष्य ऋषि का काम है। अव्यक्त परा कथ्य को व्यक्त वाणी के मन्त्र में प्रकट करने से वह

शाश्वत होता है जैसा ईशावास्योपनिषद (काण्व संहिता, अध्याय 40) में लिखा है-

स पर्यगात् शुक्रं अकायं अस्नाविरं, शुद्धं अपापविद्धं कविः मनीषी परिभूः स्वयम्भूः याथातथ्यतो अर्थान् व्यदधात् शाश्वतीभ्यः समाभ्यः।

मनुष्य ऋषियों द्वारा अलग अलग मन्त्र का दर्शन होने पर भी 3 प्रकार से वेद अपौरुषेय है-

(1) मन्त्र दर्शन के समय ऋषि अपने व्यक्तित्व से स्वतन्त्र था।
(2) यह किसी एक व्यक्ति का मत नहीं है। भिन्न भिन्न ऋषियों के मन्त्रों के संकलन रूप में औसत है।
(3) 5 प्रकार के ज्ञानेन्द्रिय द्वारा प्राप्त ज्ञान के अतिरिक्त इसमें 2 प्रकार के अतीन्द्रिय ज्ञान भी हैं। इनके माध्यम के रूप में 5 सत् प्राण तथा 2 अतिरिक्त असत् प्राण (परोरजा, ऋषि) वेद में वर्णित हैं।
क्रमशः....

---

१९ जून २०२०
वेदांत दर्शन
भाग-३

पिछली दो श्रृंखलाओं में वेदांत दर्शन को उपरी सतह के रूप में बताने का प्रयास किया , कुछ गहरे जाने से पहले हमें

जानना होगा की दर्शन किसे कहते है खास कर भारतीय दर्शन?

भारत में 'दर्शन' उस विद्या को कहा जाता है जिसके द्वारा तत्व का साक्षात्कार हो सके। 'तत्व दर्शन' या 'दर्शन' का अर्थ है तत्व का साक्षात्कार। मानव के दुखों की निवृति के लिए और/या तत्व साक्षात्कार कराने के लिए ही भारत में दर्शन का जन्म हुआ है। हृदय की गाँठ तभी खुलती है और शोक तथा संशय तभी दूर होते हैं जब एक सत्य का दर्शन होता है।

मनु का कथन है कि समुचित दर्शन ज्ञान प्राप्त होने पर कर्म मनुष्य को बंधन में नहीं डाल सकता तथा जिनको सम्यक दृष्टि नहीं है वे ही संसार के महामोह और जाल में फंस जाते हैं। भारतीय ऋषिओं ने जगत के रहस्य को अनेक कोणों से समझने की कोशिश की है। भारतीय दार्शनिकों के बारे में टी एस एलियट ने कहा था- भारतीय दर्शन किस प्रकार और किन परिस्थितियों में अस्तित्व में आया, कुछ भी प्रामाणिक रूप से नहीं कहा जा सकता। किन्तु इतना स्पष्ट है कि उपनिषद काल में दर्शन एक पृथक शास्त्र के रूप में विकसित होने लगा था। तत्त्वों को खोजने की प्रवृत्ति भारतवर्ष में उस सुदूर काल से है, जिसे हम 'वैदिक युग' के नाम से पुकारते हैं। ऋग्वेद के अत्यन्त प्राचीन युग से ही भारतीय विचारों में द्विविध प्रवृत्ति और द्विविध लक्ष्य के दर्शन हमें होते हैं। प्रथम प्रवृत्ति प्रतिभा या प्रज्ञामूलक है तथा द्वितीय प्रवृत्ति तर्कमूलक है। प्रज्ञा/प्रतिभा के बल से ही पहली प्रवृत्ति तत्त्वों के विवेचन करने में सफल

होती है और दूसरी प्रवृत्ति तर्क के सहारे तत्त्वों के समीक्षण में समर्थ होती है। अंग्रेजी शब्दों में पहली को हम 'इन्ट्यूशनिस्टिक' कह सकते हैं और दूसरी को रैशनलिस्टिक। लक्ष्य भी आरम्भ से ही दो प्रकार के थे-धन का उपार्जन तथा ब्रह्म का साक्षात्कार। प्रज्ञामूलक और तर्क-मूलक प्रवृत्तियों के परस्पर सम्मिलन से आत्मा के औपनिषदिष्ठ तत्त्वज्ञान का स्फुट आविर्भाव हुआ। उपनिषदों के ज्ञान का मिलना, आत्मा और परमात्मा के एकीकरण को सिद्ध करने वाले प्रतिभामूलक वेदान्त में हुआ। भारतीय मनीषियों के उर्वर मस्तिष्क से जिस कर्म, ज्ञान और भक्तिमय तीन विचारों का प्रवाह हुआ, उसने दूर-दूर के मानवों के आध्यात्मिक कल्मष को धोकर उन्हेंने पवित्र, नित्य-शुद्ध-बुद्ध और सदा स्वच्छ बनाकर मानवता के विकास में योगदान दिया है। इसी पतितपावनी धारा को लोग दर्शन के नाम से पुकारते हैं। खोजकर्ताओं का विचार है कि इस शब्द का वर्तमान अर्थ में सबसे पहला प्रयोग वैशेषिक दर्शन में हुआ। .

दर्शन से हम वेदांत को पहचानें तो वेदांत दर्शन के तीन स्तंभ हैं जिन्हें प्रस्थान त्रयी कहा जाता है: श्रीमद्भगवद्गीता, ब्रह्मसूत्र तथा उपनिषदों को सामूहिक रूप से **प्रस्थानत्रयी** कहा जाता है | जिनमें प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों मार्गों का तात्त्विक विवेचन है। इनमें उपनिषदों को **श्रुति प्रस्थान**, भगवद्गीता को **स्मृति प्रस्थान** और ब्रह्मसूत्रों को **न्याय प्रस्थान** कहते हैं। प्राचीन काल में भारतवर्ष में जब कोई गुरू अथवा आचार्य अपने मत का

प्रतिपादन एवं उसकी प्रतिष्ठा करना चाहता था तो उसके लिये सर्वप्रथम वह इन तीनों पर भाष्य लिखता था। निम्बार्काचार्य, आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य आदि बड़े-बड़े गुरुओं ने ऐसा कर के ही अपने मत का प्रतिपादन किया।

वेदान्त ज्ञानयोग की एक शाखा है जो व्यक्ति को ज्ञान प्राप्ति की दिशा में उत्प्रेरित करता है। वेदान्त की तीन शाखाएँ जो सबसे ज्यादा जानी जाती हैं वे हैं: अद्वैत वेदान्त, विशिष्ट अद्वैत और द्वैत। आदि शंकराचार्य, रामानुज और श्री मध्वाचार्य जिनको क्रमश: इन तीनो शाखाओं का प्रवर्तक माना जाता है, इनके अलावा भी ज्ञानयोग की अन्य शाखाएँ हैं। ये शाखाएँ अपने प्रवर्तकों के नाम से जानी जाती हैं जिनमें भास्कर, वल्लभ, चैतन्य, निम्बारक, वाचस्पति मिश्र, सुरेश्वर और विज्ञान भिक्षु। आधुनिक काल में जो प्रमुख वेदान्ती हुये हैं उनमें रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, अरविंद घोष, स्वामी शिवानंद राजा राममोहन रॉय और रमण महर्षि उल्लेखनीय हैं। ये आधुनिक विचारक अद्वैत वेदान्त शाखा का प्रतिनिधित्व करते हैं। दूसरे वेदान्तो के प्रवर्तकों ने भी अपने विचारों को भारत में भलिभाँति प्रचारित किया है परन्तु भारत के बाहर उन्हें बहुत कम जाना जाता है। .

उपनिषदों के बारे में बहुत संक्षिप्त टिप्पणी मैंने की थी, वैसे ही अगर ब्रह्म सूत्र को जाने तो:

बादरायण व्यास विरचित “ब्रह्मसूत्र“

बादरायण का वक्तव्य ‘’अथातो ब्रह्म जिज्ञासा’’ सर्वाधिक सशक्त वक्तव्य है, जो आज तक किसी ने नहीं दिया है। अब परम की खोज शुरू होती है। यह विश्व की सर्वाधिक रहस्यमय पुस्तक है। आज तक जो किताबें लिखी गई उनमें सर्वाधिक महत्वूर्ण। मैं उसे विचित्र कहता हूं क्योंकि बादरायण संसार में बहुत प्रसिद्ध नहीं हैं। हालांकि बहुतों का मानना है कीं बादरायण जी और वेड वुँस जी एक ही हैं, क्योंकि श्रीमद्भागवत महापुराण में कई जगह व्यास जी को वादरायण जी ख कर संबोधित किया गया है| यद्यपि भारत में वे एकमात्र रहस्यदर्शी है जिनकी पुस्तक पर हजारों टीकाएं लिखी गई है। उनका प्रत्येक वक्तव्य इतना अर्थ गर्भित है कह उस पर हजारों प्रकार से टीका लिखी जा सकती है। फिर भी लगता है कि कुछ पीछे शेष रह गया जो चुक नहीं सकता। यह एकमात्र पुस्तक है जिस पर टीकाएं, और फिर उन टीकाओं पर टीकाएं लिखी गई है।
ब्रह्म सूत्र में कुल ५५५ सूत्र हैं जो छोटी छोटी पंक्तियों में हैं, छोटी पंक्तियों में हैं अतः टीका उतनी ही कठिन है|

इस दर्शन के अनुसार ब्रह्म जगत का कर्ता-धर्ता व संहार कर्ता होने से जगत का निमित्त कारण है। उपादान अथवा अभिन्न कारण नहीं। ब्रह्म सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, आनंदमय, नित्य, अनादि, अनंतादि गुण विशिष्ट शाश्वत सत्ता है। साथ ही जन्म मरण आदि क्लेशों से रहित और

निराकार भी है। इस दर्शन के प्रथम सूत्र `**अथातो ब्रह्म जिज्ञासा**´ से ही स्पष्ट होता है कि जिसे जानने की इच्छा है, वह ब्रह्म से भिन्न है, अन्यथा स्वयं को ही जानने की इच्छा कैसे हो सकती है। और यह सर्वविदित है कि जीवात्मा हमेशा से ही अपने दुखों से मुक्ति का उपाय करती रही है। परंतु ब्रह्म का गुण इससे भिन्न है।
आगे चलकर वेदान्त के अनेकानेक सम्प्रदाय (अद्वैत, द्वैत, द्वैताद्वैत, विशिष्टाद्वैत आदि) बने।
क्रमशः: ....

---

२१ जून २०२०
वेदांत
भाग-4

हमने वेदांत के रूप के बारे में संक्षिप्त में समझा आईये अब जानते हैं कुछ तथ्य जो वेदांत को सर्वोच्च ज्ञान बनाते हैं:

वेदांत क्या है?

दर्शन के क्षेत्र में उपनिषदों का यह ब्रह्मवाद शंकराचार्य, रामानुजाचार्य आदि के उत्तरकालीन वेदांत मतों का आधार बना। उपनिषदों का अभिमत ही आगे चलकर वेदांत का सिद्धांत और संप्रदायों का आधार बन गया। उपनिषदों की शैली सरल और गंभीर है। अनुभव के गंभीर तत्व अत्यंत सरल भाषा में उपनिषदों में व्यक्त हुए हैं। उनको समझने के लिए अनुभव का प्रकाश अपेक्षित है। ब्रह्म का अनुभव ही उपनिषदों का लक्ष्य है। वह अपनी साधना से ही प्राप्त होता है। गुरु का संपर्क उसमें अधिक सहायक होता है। तप, आचार आदि साधना की भूमिका बनाते हैं। कर्म आत्मिक

अनुभव का साधक नहीं है। कर्म प्रधान वैदिक धर्म से उपनिषदों का यह मतभेद है। संन्यास, वैराग्य, योग, तप, त्याग आदि को उपनिषदों में बहुत महत्व दिया गया है। इनमें श्रमण परंपरा के कठोर संन्यासवाद की प्रेरणा का स्रोत दिखाई देता है। तपोवादी जैन और बौद्ध मत तथा 'गीता का कर्मयोग' उपनिषदों की आध्यात्मिक भूमि में ही अंकुरित हुए हैं।

अगर वेदांत के प्रस्थान त्रयी की बात करें तो मेरी अवधारण है:

- वेदों के सार को लेकर बने उपनिषद
- उन्हें पुनः गूढ़ तत्वों में संचित कर लिखा, अंग्रेजी में कहते हैं न बुल्लेटिंग अर्थार्थ एक एक संक्षिप्त पंक्ति में मुख्य बिन्दुओं को लिखा गया ब्रह्म सूक्त में
- वेदों के सार को जो उपनिषद में थे उन्हें काव्य रूप में सारस्वरूप लिखा गया गीता में

इन ग्रंथों से बना वेदांत, ...

उत्तर मीमांसा (वेदांत) की अवधारणा

उत्तर मीमांसा वेदों के उत्तर भाग पर आश्रित है। उपनिषद वेदों के अंतिम भाग हैं, अत: वे वेदांत कहलाते हैं। उत्तर मीमांसा का अधिक प्रसिद्ध नाम 'वेदांत' ही है। ब्रह्मसूत्र और उपनिषदों की व्याख्याओं के द्वारा वेदांत का विस्तार हुआ है। अनेक आचार्यों ने भिन्न भिन्न दृष्टिकोण से ब्रह्मसूत्रों और उपनिषदों की व्याख्या की है। आचार्यों के विभिन्न मतों के आधार पर वेदांत के अनेक संप्रदाय बन गए। ये अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, द्वैत आदि के नाम से

प्रसिद्ध हैं। वेदांत के ये संप्रदाय सांख्य आदि की भाँति दार्शनिक नहीं हैं; इन सभी संप्रदायों के धार्मिक पीठ देश के विभिन्न स्थानों में प्रतिष्ठित हैं। इन पीठों की आचार्य-परंपरा आज तक अक्षुण्ण चली आ रही है। वेदांत के इन अनेक संप्रदायों में शंकराचार्य का 'अद्वैतमत' सबसे प्राचीन है। यह संभवत: सबसे अधिक प्रतिष्ठित भी है। शंकराचार्य का अद्वैतवाद उपनिषदों पर आश्रित है। उनके अनुसार ब्रह्म ही एक मात्र सत्य है। जगत का विक्षेप और जीव के ब्रह्मभाव का आवरण करती है। अज्ञान का निवारण होने पर जीव को अपने ब्रह्मभाव का साक्षात्कार होता है। यही मोक्ष है। ब्रह्म सच्चिदानंद है। ब्रह्म की सत्ता और चेतना तथा उसका आनंद अनंत है।
वेदव्यास ने वेदत्रयी को विशेष महत्त्व दिया। उस युग तक अथर्ववेद की रचना नहीं हुई थी। इस दर्शन का मुख्याधार प्रस्थान त्रयी है अर्थात उपनिषद, ब्रह्मसूत्र तथा भगवद्गीता नामक ग्रंथों को मुख्य रूप से ग्रहण किया गया है। इसके अनुसार ब्रह्म जगत की उत्पत्ति का कारण है। वह केवल अनुभूति का विषय है। आत्मा स्वत:सिद्ध है तथा मोक्ष ब्रह्म में लीन होने का अथवा मुक्ति का पर्याय है। वेदांत में उपनिषदों के तत्त्व ज्ञान को विशेष रूप से ग्रहण किया गया है। वेदांत दर्शन का नाम ही वैदिक युग के अंतिम चरण का द्योतक है। उस युग में यह दर्शन सर्वाधिक प्रचलित हुआ, क्योंकि बादरायण व्यास ने दार्शनिक व्याख्या के साथ-साथ समाजपरक अनेक तथ्यों को सामने रखा था; **जैसे स्त्री-पुरुष समानता, शूद्रों के विषय में उदारता आदि**। इसका सबसे बड़ा योगदान **समस्त विश्व में एकता का भाव जगाने का प्रयास**

है। उपनिषदों में द्वैत तथा अद्वैत दर्शन का सुंदर विवेचन उपलब्ध है। बादरायण व्यास ने अब उसके साथ भगवद्गीता तथा ब्रह्मसूत्र के तथ्यों को समाविष्ट करके अत्यंत निखरा हुआ दार्शनिक रूप प्रस्तुत किया। उन्होंने पुन: **'तत्त्वमसि', 'अहं ब्रह्मास्मि'** की स्थापना की। इस दर्शन में एक धूमिल तत्त्व दर्शनीय है, वह यह कि बादरायण ने ब्रह्म को परिणाम और नित्य दृष्टि दोनों ही रूपों में अंकित किया है जो कि परस्पर विरोधी विचारधाराएं हैं। विरोधी तत्त्वजन्य उलझन को दूर करते हुए शंकराचार्य ने परिणामवाद को विवर्तवाद में परिणत किया। वेदांत का सबसे बड़ा सिद्धांत अद्वैतवाद जिसको अदि शंकर ने मूर्त रूप दिया| शंकराचार्य ने अद्वैतवाद की प्रतिष्ठा की, जो मायावाद भी कहलाया। उन्होंने परमेश्वर की सत्ता को 'एक' न कहकर 'अद्वैत' कहा जिसका सरल शब्दों में कहें तो उस समय चले द्वेत्वाद का काट उन्होंने दिया कि जो द्वेत नहीं है वह अद्वेत | इसका अंकन 'नेति, नेति' के माध्यम से ही संभव है। जगत की संपूर्ण सत्ता को नकार कर ही ब्रह्म की सत्ता का अनुमान लगाया जा सकता है।

---

२३ जून २०२०

वेदांत

भाग ५

शंकराचार्य ने ब्रह्म को 'एकता', 'अनेकता' से अलग 'उपाधिशून्य चेतन तत्त्व' माना है। माया भी अनिर्वचनीय है-वह न सत है, न असत। सत असत से विलक्षण है। उसका परिणामी उपादान कारण जगत है। जैसे रज्जु में सांप की

अथवा सीपी में रजत की प्रतीति होती है- उसका परिणामी उपादान कारण अज्ञान है- वही माया है- जो सत असत विलक्षण है। अद्वैत ब्रह्म की अवस्थाएं हैं- पारमार्थक अवस्था में वह अद्वैत ब्रह्म है, सत्य है। व्यावहारिक अवस्था में वह जीव, तथा प्रतिभासित अवस्था में स्वप्न कहलाता है। इसका विस्तृत ज्ञान अदि शंकर ने दृष्टि विवेक नामक ग्रन्थ में दिया है, अत: जगत एवं संसार का उपादान कारण ब्रह्म है। माया की उपाधि से ब्रह्म ही ईश्वर बन जाता है। जैसे पृथ्वी से अनेक वस्तुओं का जन्म होता है, वैसे ही ईश्वर से जीव और विभिन्नताएं आभावित होती हैं। इस अनेकता से ब्रह्म पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता वह मायावी मायाजन्य तत्त्वों से अप्रभावित रहता है। अविद्या की निवृत्ति से मोक्ष का साक्षात्कार होता है। शंकराचार्य के अद्वैतवाद ने समस्त भारत को प्रभावित किया। आज भी भारतीय समाज का प्रबुद्ध वर्ग इससे प्रभावित है। समसामयिक विद्वानों ने विभिन्न दर्शनों की स्थापना की। उनकी वैचारिकता का मूलाधार श्रीमद्भागवत था। सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक ब्रह्म को स्वीकार करते हुए भी उन्होंने विभिन्न कोणों से जगत, ब्रह्म और जीव की व्याख्या की।

आईये वेदांत की विभिन्न शाखाओं को जानें:

अद्वैत

जागृत, स्वप्न और सुषुप्त की अवस्थाओं से परे तथा बाह्य और आंतरिक विषयों से अतीत अनुभव में ब्रह्म का प्रकाश होता है। विषयातीत होने के कारण ब्रह्म अनिर्वचनीय है। संख्यातीत होने के कारण उसे 'अद्वैत' कहा जाता है। त्याग

और प्रेम के व्यवहारों में यह अद्वैत भाव विभासित होता है। समाधि में इसका आंतरिक साक्षात्कार होता है। अद्वैत भाव को सिद्ध करने के लिए ब्रह्म को जगत का कारण माना गया है। ब्रह्म को जगत का उपादान कारण मानकर दोनों का अद्वैत सिद्ध हो जाता है। माण्डुक्य उपनिषद में इसकी सुन्दर व्याख्या है, तत्वमसि (तुम तुम ही हो) भी वहीँ से आया|

विशिष्टाद्वैत

शंकराचार्य के लगभग 300 वर्ष बाद 11वीं शताब्दी में रामानुजाचार्य ने ब्रह्मसूत्रों की नवीन व्याख्या के आधार पर विशिष्टाद्वैत मत की स्थापना की। रामानुजकृत 'श्रीभाष्य' के आधार पर यह 'श्रीसंप्रदाय' कहलाता है। रामानुज शंकर के 'मायावाद' को नहीं मानते थे। उनके अनुसार जीव, जगत और ब्रह्म तीनों पारमार्थिक सत्य हैं। जगत ब्रह्म का विवर्त नहीं वरन ब्रह्म की वास्तविक रचना है। ब्रह्म और ईश्वर एक दूसरे के पर्याय हैं। जीव ब्रह्म का अंश है। मोक्ष में जगत का विलय नहीं होता और जीव का स्वतंत्र अस्तित्व बना रहता है। ब्रह्म निर्विशेष और निर्गुण नहीं वरन सविशेष्य और सगुण है। ब्रह्म ही स्वतंत्र सत्ता है। जीव और जगत उसके अपृथक्सिद्ध विशेषण हैं। ब्रह्म से पृथक् उनका अस्तित्व संभव नहीं है। अत: रामानुज का मत भी अद्वैत ही है। जीव और जगत् के विशेषणों से युक्त ब्रह्म का इनके सथ विशिष्ट अद्वैतभाव है। ब्रह्म इनका अंतर्यामी स्वामी है। रामानुज के मत में भक्ति मोक्ष का मुख्य साधन है।

भगवान के गुणों का ज्ञान भक्ति का प्रेरक है। साधारण जन और शूद्रों के लिए प्रपत्ति अर्थात शरणागति सर्वोत्तम मार्ग हैं।

द्वैताद्वैतवाद

रामानुज के कुछ वर्ष बाद 11वीं शताब्दी में ही निंबार्काचार्य ने द्वैताद्वैतवाद की प्रतिष्ठा की। ब्रह्मसूत्रों पर 'वेदांत-पारिजात-सौरभ' नाम से उनका भाष्य इस मत का आधार है। रामानुज के समान निंबार्क भी जीव और जगत को सत्य तथा ब्रह्म का आश्रित मानते हैं। रामानुज के मत में अद्वैत प्रधान है। निंबार्क मत में द्वैत का अनुरोध अधिक है। रामानुज के अनुसार जीव और ब्रह्म में स्वरूपगत साम्य है, उनकी शक्ति में भेद हैं। निंबार्क के मत में उनमें स्वरूपगत भेद है। निंबार्क के अद्वैत का आधार जीव की ब्रह्म पर निर्भरता है। निंबार्क का ब्रह्म सगुण ईश्वर है। कृष्ण के रूप में उसकी भक्ति ही मोक्ष का परम मार्ग है। यह भक्ति भगवान के अनुग्रह से प्राप्त होती है। भक्ति से भगवान का साक्षात्कार होता है। यही मोक्ष है। रामानुज और निंबार्क दोनो के मत में विदेह मुक्ति ही मान्य है।

द्वैतमत

निंबार्क के बाद 13वीं शताब्दी में मध्वाचार्य ने द्वैत मत का प्रतिपादन किया। वे पूर्णप्रज्ञ तथा आनंदतीर्थ के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। उन्होंने शंकराचार्य के अद्वैत और निंबार्क के द्वैताद्वैत का खंडन करके द्वैतवाद की स्थापना की है। उनके अनुसार भेद और अभेद दोनों की एकत्र स्थति संभव

नहीं है। शंकराचार्य का 'मायावाद' भी उन्हें मान्य नहीं है। जगत मिथ्या नहीं यथार्थ है। सत और असत से भिन्न माया की तीसरी अनिर्वचनीय कोटि संभव नहीं है। ईश्वर, जीव और जगत तीनों एक दूसरे से भिन्न हैं। भेद के पाँच प्रकार हैं-

ईश्वरजीव/ ईश्वर-जगत/ जीव-जगत्/ जीव-जीव और जड़ पदार्थ
इनमें परस्पर भेद है। ईश्वर जगत का उपादान कारण नहीं, निमित्त कारण है। उपादान कारण प्रकृति है। ईश्वर उसका नियामक है। ईश्वर की भक्ति के द्वारा मोक्ष प्राप्त होता है। मुक्त जीवों में परस्पर भेद रहता है। वे ईश्वर से भिन्न रहकर अपनी सामर्थ्य के अनुसार ईश्वर की विभूति में भाग लेते हैं।

शुद्धाद्वैत मत

15वीं शताब्दी में वल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत मत का प्रचार किया। इस मत का आधार 'ब्रह्मसूत्रों' पर लिखित वल्लभाचार्य का 'अणुभाष्य' है। वे माया से अलिप्त शुद्ध ब्रह्म का अद्वैत भाव मानते हैं। यह ब्रह्म निर्गुण नहीं, सगुण है तथा माया के संबंध से रहित है। ब्रह्म अपनी अनंत शक्ति से जगत् के रूप में व्यक्त होता है। चित और आनंद का तिरोधान होने के कारण जगत में केवल सत रूप से ब्रह्म की अभिव्यक्ति होती है। जीव और ब्रह्म स्वरूप से एक हैं। अग्नि के स्फुलिंगों की भांति जीव ब्रह्म का अंश है, विशेषण

नहीं। इस प्रकार सर्वत्र अद्‌वैत है, कहीं भी द्‌वैत नहीं। भक्ति मोक्ष के साधन दो प्रकार के हैं-

मर्यादा, पुष्टि

16वीं शताब्दी में चैतन्य महाप्रभु ने 'अचिंत्य भेदाभेद' का प्रवर्तन किया। उनके शिष्य रूप गोस्वामी ने गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय का प्रतिष्ठापन किया। इनके अनुसार भगवान की शक्ति अचिंत्य है। वह विरोधी गुणों का समन्वय कर सकती है। भेदाभेद का चिंतन न करके मोक्ष की साधना करना ही जीवन का धर्म है। मोक्ष का अर्थ भगवान की प्रीति का निरंतर अनुभव है।

वेदांत भाग ६

हमने अब तक जाना है :

भारतीय चिन्तन धारा में जिन दर्शनों की परिगणना विद्‌यमान है, उनमें शीर्ष स्थानीय दर्शन कौन सा है ? ऐसी जिज्ञासा होने पर एक ही नाम उभरता है, वह है-वेदान्त। यह भारतीय दर्शन के मन्दिर का जगमगाता स्वर्णकलश है-दर्शनाकाश का देदीप्यमान सूर्य है। वेदान्त की विषय वस्तु, इसके उद्‌देश्य, साहित्य और आचार्य परम्परा आदि पर गहन चिन्तन करें, इससे पूर्व आइये, वेदान्त शब्द का अर्थ समझें।

वेदान्त का अर्थ-

वेदान्त का अर्थ है- वेद का अन्त या सिद्‌धान्त। तात्पर्य यह है- ‘वह शास्त्र जिसके लिए उपनिषद्‌ ही प्रमाण है। वेदांत में जितनी बातों का उल्लेख है, उन सब का मूल उपनिषद्‌ है।

इसलिए वेदान्त शास्त्र के वे ही सिद्धान्त माननीय हैं, जिसके साधक उपनिषद् के वाक्य हैं। इन्हीं उपनिषदों को आधार बनाकर बादरायण मुनि ने ब्रह्मसूत्रों की रचना की।' इन सूत्रों का मूल उपनिषदों में हैं। जैसा पूर्व में कहा गया है- उपनिषद् में सभी दर्शनों के मूल सिद्धान्त हैं।
आईये देखते हैं

वेदान्त का साहित्य क्या कहता है:

ब्रह्मसूत्र- उपरिवर्णित विवेचन से स्पष्ट है कि वेदान्त का मूल ग्रन्थ उपनिषद् ही है। अत: यदा-कदा वेदान्त शब्द उपनिषद् का वाचक बनता दृष्टिगोचर होता है। उपनिषदीय मूल वाक्यों के आधार पर ही बादरायण द्वारा अद्वैत वेदान्त के प्रतिपादन हेतु ब्रह्मसूत्र सृजित किया गया। महर्षि पाणिनी द्वारा अष्टाध्यायी में उल्लेखित 'भिक्षुसूत्र' ही वस्तुत: ब्रह्मसूत्र है। संन्यासी, भिक्षु कहलाते हैं एवं उन्हीं के अध्ययन योग्य उपनिषदों पर आधारिक पराशर्य (पराशर पुत्र व्यास) द्वारा विरचित ब्रह्म सूत्र है, जो कि बहुत प्राचीन है।
यही वेदांत दर्शन पूर्व मीमांसा के नाम से प्रख्यात है। महर्षि जैमिनि का मीमांसा दर्शन पूर्व मीमांसा कहलाता है, जो कि द्वादश अध्यायों में आबद्ध है। कहा जाता है कि जैमिनि द्वारा इन द्वादश अध्यायों के पश्चात् चार अध्यायों में संकर्षण काण्ड (देवता काण्ड) का सृजन किया था। जो अब अनुपलब्ध है, इस प्रकार मीमांसा षोडश अध्यायों में सम्पन्न हुआ है। उसी सिलसिले में चार अध्यायों में उत्तर मीमांसा या ब्रह्म-सूत्र का सृजन हुआ। इन दोनों ग्रन्थों में अनेक आचार्यों का नामोल्लेख हुआ है। इससे ऐसा अनुमान

होता है कि बीस अध्यायों के रचनाकार कोई एक व्यक्ति थे, चाहे वे महर्षि जैमिनि हों अथवा बादरायण बादरि। पूर्व मीमांसा में कर्मकाण्ड एवं उत्तर मीमांसा में ज्ञानकाण्ड विवेचित है। उन दिनों विद्यमान समस्त आचार्य पूर्व एवं मीमांसा के समान रूपेण विद्वान् थे। इसी कारण जिनके नामों का उल्लेख जैमिनीय सूत्र में है, उन्हीं का ब्रह्मसूत्र में भी है। वेदान्त संबंधी साहित्य प्रचुर मात्रा में विद्यमान है, जिसका उल्लेख अग्रिम पृष्ठों पर 'वेदान्त का अन्य साहित्य और आचार्य परम्परा' शीर्षक में आचार्यों के नामों सहित विवेचित किया गया है।

वेदान्त का अन्य साहित्य और आचार्य परम्परा

ब्रह्मसूत्र के अतिरिक्त वेदान्त दर्शन का और भी साहित्य प्रचुर मात्रा में संप्राप्त होता है, जो विभिन्न आचार्यों ने विविध प्रकारेण ब्रह्म-सूत्र आदि ग्रन्थों पर भाष्य, वृत्तियाँ टीकाएँ आदि लिखी हैं। यद्यपि प्राचीन आचार्यों में **बादरि, आश्मरथ्य, आत्रेय, काशकृत्स्न, औडुलोमि एवं कार्ष्णाजिनि आजि** के मतों का भी वर्णन प्राप्त है; किन्तु इनके ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं। आइये जो ग्रन्थ उपलब्ध हैं, उनका व उनके आचार्यों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करें।

श्रृंगेरी पीठ के प्रतिष्ठित यति श्री विद्यारण्य स्वामी ने वेदान्त विषयक कई ग्रन्थ लिखे, जिनमें 'पंचदशी' का विशेष स्थान है। इनके अन्य ग्रन्थ हैं- जीवन्मुक्ति विवेक, विवरण प्रमेय संग्रह, बृहदारण्यक वार्तिक सार आदि।

1- **आद्य शंकराचार्य–** ब्रह्म-सूत्र पर सर्वप्राचीन एवं प्रामाणिक भाष्य आद्य शंकराचार्य का उपलब्ध होता है। यह शांकरभाष्य के नाम से प्रख्यात है। विश्व में भारतीय दर्शन

एवं शंकराचार्य के नाम से जितनी ख्याति प्राप्त की है, उतनी न किसी आचार्य ने प्राप्त की और न ग्रन्थ ने। शंकराचार्य का जन्म 788 ई. में तथा निर्वाण 820 ई. में हुआ बताया जाता है, इनके गुरु गोविन्दपाद तथा परम गुरु गौड़पादाचार्य थे। इनके ग्रन्थों में ब्रह्मसूत्र-भाष्य (शारीरिक भाष्य), दशोपनिषद् भाष्य, गीता-भाष्य, माण्डूक्यकारिका भाष्य, विवेकचूड़ामणि, उपदेश-साहस्री आदि प्रमुख हैं।

2- **भास्कराचार्य–** आचार्य शंकर के समकालीन भास्कराचार्य त्रिदण्डीमत के वेदन्ती थे। ये ज्ञान एवं कर्म दोनों से मोक्ष स्वीकार करते हैं। इनके अनुसार ब्रह्म के शक्ति-विक्षेप से ही सृष्टि और स्थिति व्यापार अनवरत चलता है। इन्होंने ब्रह्मसूत्र पर एक लघु भाष्य लिखा है।

3- **सर्वज्ञात्म मुनि–** ये सुरेश्वराचार्य के शिष्य थे, जिन्होंने ब्रह्मसूत्र पर एक पद्यात्मक व्याख्या लिखी है, जो 'संक्षेप-शारीरिक' नाम से प्रसिद्ध है।

4- **अद्वैतानन्द–** ये रामानन्द तीर्थ के शिष्य थे, इन्होंने शंकराचार्य की शारीरिक भाष्य पर 'ब्रह्मविद्याभरण' नामक श्रेष्ठ व्याख्या लिखी है।

5- **वाचस्पति मिश्र**– वाचस्पति मिश्र ने भी शांकर- भाष्य पर 'भामती' नामक उत्तम व्याख्या ग्रन्थ लिखा है। 'ब्रह्मतत्त्व समीक्षा' नामक वेदान्त ग्रन्थ इन्हीं का है।

6- **चित्सुखाचार्य–** तेरहवीं सदी के चित्सुखाचार्य ने वेदान्त का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'तत्त्व-दीपिका' नाम से लिखा, जिसने उन्हीं के नाम से 'चित्सुखी' के रूप में विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की।

7- **विद्यारण्य स्वामी–**

8- **प्रकाशात्मा–** इन्होंने पद्मपादकृत पंचपादिका पर 'विवरण' नाम की व्याख्या का सृजन किया है। इसी के आधार पर 'भामती प्रस्थान' से पृथक् 'विवरण प्रस्थान' निर्मित हुआ है।

9- **अमलानन्द–** अमलानन्द (जो अनुभवानन्द के शिष्य थे) ने भामती पर 'कल्पतरु' नामक व्याख्या एवं ब्रह्मसूत्र पर एक वृत्ति भी लिखी है। इसका अपर नाम 'व्यासाश्रम' था।

वेदांत भाग-७

वेदान्त दर्शन का स्वरूप और प्रतिपाद्य-विषय

जब मनुष्य जीवन-यापन करने लगता है तो उसके मन में दूसरी जिज्ञासा जो उठती है, वह है ब्रह्य -जिज्ञासा। ब्रह्यसूत्र का प्रथम सूत्र ही है-

अथातो ब्रह्यजिज्ञासा।।

ब्रह्य के जानने की लालसा।

इस जिज्ञासा का चित्रण श्वेताश्वर उपनिषद् में बहुत बहुत भली-भाँति किया गया है। उपनिषद् का प्रथम मंत्र है-

ब्रह्यवादिनो वदन्ति-

किं कारणं ब्रह्य कुत: स्म जाता जीवाम केन क्व च संप्रतिष्ठा:।

अधिष्ठिता: केन सुखेतरेषु वर्तामहे ब्रह्यविदो व्यवस्थाम्।।

अर्थ-ब्रह्य का वर्णन करने वाले कहते है, इस (जगत्) का कारण क्या है, इस (जगत्) का कारण क्या है? हम कहाँ से उत्पन्न है? कहाँ स्थित है? (कैसे स्थित है?)यह सुख-दु:ख क्यों होता है? ब्रह्य की जिज्ञासा करने वाला यह जानने

चाहते हैं। उत्पन्न हुआ कि `यह सब क्या है, क्यों हैं? इत्यादि।

पहली जिज्ञासा कर्म धर्म की जिज्ञासा थी और दूसरी जिज्ञासा जगत् का मूल कारण जानने ज्ञान की थी।

इस दूसरी जिज्ञासा का उत्तर ही ब्रह्यसूत्र अर्थात् उत्तर मीमांसा है। चूँकि यह दर्शन वेद के परम ओर अन्तिम तात्पर्य का दिग्दर्शन कराता है, इसलिए इसे वेदान्त दर्शन के नाम से ही जाना जाता हैं

वेदस्य अन्त: अन्तिमो भाग ति वेदान्त:।। यह वेद के अन्तिम ध्येय ओर कार्य क्षेत्र की शिक्षा देता है।

ब्रह्मसूत्र के प्रवर्तक महिर्ष बादरायण है। इस दर्शन में चार अध्याय, प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद (कुल १६ पाद) और सूत्रों की संख्या ५५५ है।

इसमें बताया गया है कि तीन ब्रह्य अर्थात् मूल पदार्थ है-प्रकृति,जीवात्मा और परमात्मा। तीनों अनादि हैं। इनका आदि-अन्त नहीं। तीनों ब्रह्य कहाते है और जिसमें ये तीनो विद्यमान है अर्थात् जगत् वह परम ब्रह्य है।

प्रकृति जो जगत् का उपादान कारण है, परमाणुरूप है जो त्रिट (तीन शक्तियो-सत्व, राजस् और तमस् का गुट) है। इन तीनो अनादि पदार्थों का वर्णन ब्रह्यसूत्र(उत्तर मीमांसा) में है।

जीवात्मा का वर्णन करते हुए इसके जन्म-मरण के बन्धन में आने का वर्णन भी ब्रह्यसूत्र में है। साथ ही मरण-जन्म से छुटकारा पाने का भी वर्णन हैं।

परमात्मा जो अपने शबत रूप में तत्वों से संयुक्त होकर भासता है, परन्तु उसका अपना शुद्ध रूप नेति-नेति शब्दों से ही व्यक्त होता है।

यह दर्शन भी वेद के कहे मन्त्रों की व्याख्या में ही है।

परमात्मा का परम गुह्य ज्ञान वेदान्त के रूप में सर्वप्रथम उपनिषदों में ही प्रकट हुआ है। **'वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्था:.....**'(मुण्डक.)। **'वेदान्ते परमं गुह्यम् पुराकल्पे प्रचोदितम्'** (श्वेताश्ववतर. **) 'यो वेदादौ स्वर: प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठित**:' (महानारायण,) इत्यादि श्रुतिवचन उसी तथ्य का डिंडिम घोष करते हैं। इन श्रुति वचनों का सारांश इतना ही है कि संसार में जो कुछ भी दृश्यमान है और जहाँ तक हमारी बुद्धि अनुमान कर सकती है, उन सबका का मूल स्रोत्र एकमात्र 'परब्रह्म' ही है।

इस प्रकार ब्रह्मसूत्र प्रमुखतया ब्रह्म के स्वरूप को विवेचित करता है एवं इसी के संबंध से उसमें जीव एवं प्रकृति के संबंध में भी विचार प्रकट किया गया है। यह दर्शन चार अध्यायों एवं सोलह पादों में विभक्त है। इनका प्रतिपाद्य क्रमश: निम्रवत् है-

1- प्रथम अध्याय में वेदान्त से संबंधित समस्त वाक्यों का मुख्य आशय प्रकट करके उन समस्त विचारों को समन्वित किया गया है, जो बाहर से देखने पर परस्पर भिन्न एवं अनेक स्थलों पर तो विरोधी भी प्रतीत होते हैं। प्रथम पाद में वे वाक्य दिये गये हैं, जिनमें ब्रह्म का स्पष्टतया कथन है, द्वितीय में वे वाक्य हैं, जिनमें ब्रह्म का स्पष्ट कथन नहीं है एवं अभिप्राय उसकी उपासना से है। तृतीय में वे वाक्य समाविष्ट हैं, जिनमें ज्ञान रूप में ब्रह्म का वर्णन है। चतुर्थ पाद में विविध प्रकार के विचारों एवं संदिग्ध भावों से पूर्ण वाक्यों पर विचार किया गया है।

2- द्वितीय अध्याय का विषय 'अविरोध' है। इसके अन्तर्गत श्रुतियों की जो परस्पर विरोधी सम्मतियाँ हैं,

उनका मूल आशय प्रकट करके उनके द्वारा अद्वैत सिद्धान्त की सिद्धि की गयी है। इसके साथ ही वैदिक मतों (सांख्य, वैशेषिक, पाशुपत आदि) एवं अवैदिक सिद्धान्तों (जैन, बौद्ध आदि) के दोषों एवं उनकी अयथार्थता को दर्शाया गया है। आगे चलकर लिंग शरीर प्राण एवं इन्द्रियों के स्वरूप दिग्दर्शन के साथ पंचभूत एवं जीव से सम्बद्ध शंकाओं का निराकरण भी किया गया है।

3- तृतीय अध्याय की विषय वस्तु साधना है। इसके अन्तर्गत प्रथमत: स्वर्गादि प्राप्ति के साधनों के दोष दिखाकर ज्ञान एवं विद्या के वास्तविक स्रोत्र परमात्मा की उपासना प्रतिपादित की गयी है, जिसके द्वारा जीव ब्रह्म की प्राप्ति कर सकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति में कर्मकाण्ड सिद्धान्त के अनुसार मात्र अग्निहोत्र आदि पर्याप्त नहीं वरन् ज्ञान एवं भक्ति द्वारा ही आत्मा और परमात्मा का सान्निध्य सम्भव है।

4- चतुर्थ अध्याय साधना का परिणाम होने से फलाध्याय है। इसके अन्तर्गत वायु, विद्युत एवं वरुण लोक से उच्च लोक-ब्रह्मलोक तक पहुँचने का वर्णन है, साथ ही जीव की मुक्ति, जीवन्मुक्त की मृत्यु एवं परलोक में उसकी गति आदि भी वर्णित है। अन्त में यह भी वर्णित है कि ब्रह्म की प्राप्ति होने से आत्मा की स्थिति किस प्रकार की होती है, जिससे वह पुन: संसार में आगमन नहीं करती। मुक्ति और निर्वाण की अवस्था यही है। इस प्रकार वेदान्त दर्शन में ईश्वर, प्रकृति, जीव, मरणोत्तर दशाएँ, पुनर्जन्म, ज्ञान, कर्म, उपासना, बन्धन एवं मोक्ष इन दस विषयों का प्रमुख रूप से विवेचन किया गया है।

वेदांत भाग-८

कुछ सूत्र जो मेरी अल्प बुद्धि के अनुसार व्यवहारिक अध्यात्मिक एवं जीवनोपयोगी हैं उनको निचे दे रहा हूँ,

1. इस उपलब्ध जड़ चेतन जगत का उपादान एवं निमित्तकारण ब्रह्म ही है ||१|१|२||

2. सर्वशक्तिमान परब्रह्म परमेश्वर की जो दो प्रकृतियाँ हैं परा (चेतन जीव समुदाय)एवं अपरा (परिवर्तनशील जड़ समुदाय) यह ब्रह्म की ही अभिन्न शक्तिया हैं ||3|२|२८||

3. वह इन शक्तियों के आश्रय है अतः इनसे भिन्न भी है परब्रह्म, जीव एवं जड़ वर्ग से सर्वदा विलिक्षण एवं उत्तम है ||3|२|३१||

4. श्रृष्टि काल में जगत निर्माण हेतु परमेश्वर इन्ही दो प्रकृतियों से जग की रचना करता है एवं प्रलय काल में इन्हें अपने में विलीन कर लेता है

5. जग निर्माता शब्द स्पर्श आदि गुनों से रहित निर्गुण एवं निराकार भी है और अनंत समस्त गुणों से युक्त सगुन एवं साकार भी अतः एक ही परमात्मा का यह उभयविध स्वरुप स्वाभाविक तथा परम सत्य है ||3|२|११-२६||

6. चेतन जीव समुदाय परब्रह्म की परा प्रकृति का समूह है, अतः उसका ही अंश है, ||२|3|४३||इस दृष्टि से यह अभिन्न भी है, तथापि परमेश्वर सब का नियंता कर्म फलों का व्यवस्थापक एवं स्वामी है एवं जीव नित्य है ||२|४|१६||

7. जीव का जन्मना एवं मरना शरीर के सम्बन्ध से औपचारिक मात्र है ||3|२|६||

8. जीव का एक शरीर से दुसरे शरीर में जाना लोकांतर में जाना आना शरीर के सम्बन्ध से ही है, ब्रह्म लोक में वह सूक्ष्म देह के सम्बन्ध से ही जाता है, ||४|२|९||
9. ज्ञानी वही है जिसका किसी भी प्रकार प्राकृत देह से सम्बन्ध नहीं रहता जब परब्रह्म परमेश्वर के पास परमधाम पहुंचता है वह अपने दिव्य रूप से ही संपन्न होता है ||४|४|१||
10. यही उसकी सर्वप्रकार से बंधन रहित मुक्तावस्था है ||४|४|२||
11. कार्य ब्रह्म के लोक में जाने वाले जीव को वहाँ के भोगों का उपभोग संकल्प मात्र से भी होता है, और उसके संकल्प द्वारा प्राप्त हुए शरीर से भी ||४|४|८||-||४|४|१२||
12. जीव का कर्तापन देह एवं इन्द्रियों के सम्बन्ध से औपचारिक है एवं इसमें परमात्मा ही कारण स्वरुप हैं ||२|3|३३-४१||
13. जिन ग्यानी पुरुषों के मन में किसी प्रकार की कामना नहीं रहती जो सर्वदा निष्काम एवं आप्तकाम हैं उनको तो यहीं ब्रह्म इ प्राप्ति हो जाती है उन्हें ब्रह्म लोक भी नहीं जाना पड़ता |
14. ब्रह्म ज्ञान सब आश्रमों में हो सकता है, सब आश्रमों में ब्रह्म विद्या का अधिकार है, ||3|४||४९||
15. ब्रह्मलोक जाने वाले का पुनरागमन नहीं होता ||४|४|२२||
16. ग्यानी के पूर्वकृत संचित पुण्य-पाप का नाश हो जाता है, नए कर्मों से उसका सम्बन्ध नहीं होता, ||४|१|१३-१४||
17. प्रारब्ध कर्म का उपभोग द्वारा नाश हो जाने पर

वर्तमान देह नष्ट हो जाती है और परमात्मा को प्राप्त हो जाती है ||४|१|१९||

18. ब्रह्म विद्या कभी भी कर्मों का अंग नहीं होती ||3|४|२-२५||

19. परमात्मा की प्राप्ति का हेतु ब्रह्म विद्या ही है ||3|3|४७||

20. यह जग प्रलयकाल में भी अप्रकट रूप में वर्तमान रहता है ||२|१|१६||

क्रमशः ....अभी तक आपने जाना वेदांत दर्शन क्या है एवं दर्शन के कुछ प्रमुख सूत्र, अब स्वामी विवेकानंद ने क्या लिखा वेदांत दर्शन के बारे में पढ़िए.........

स्वामी विवेकानंद ने उत्तर मीमांसा में बहुत अच्छी विवेचना की है उसका सार संक्षेप निम्न अनुसार है {सौ: सिलेक्शन फ्रॉम द कम्पलीट वर्क्स ऑफ़ स्वामी विवेकानंद (प्र: अद्वैत आश्रम)}

वेदांत का दर्शन जैसा की आज के युग में कहा जाता है, भारत में स्थित सभी सम्प्रदाय , धर्म, जाति का समन्वय है, अतः मेरे विचार से वेदांत की कई प्रगतिशील परिभाषा एवं भाष्य हैं, द्वैत से आरंभ होकर अद्वैत तक | वेदांत का शाब्दिक अर्थ वेद का अंत होता है, वेद हिन्दुओं का धार्मिक वैचारिक ग्रन्थ है, पश्चिम में इसे कुछ काल पूर्व तक मात्र मन्त्र और

कर्म ही बताया गया था परन्तु अब वह भ्रान्ति दूर हो चुकी है अब वेदों को वेदांत तक मान लिया गया है, जितने भी भाष्यकार हुए वे वेदांत को ही मुख्य बतलाते हैं एवं वेदांत के मंत्रो को ही उधृत करते हैं, इस प्रक्रिया को श्रुति कहते है अथार्थ सुन कर, अतः वेदांत में जितने भी ग्रन्थ हैं वे लिखे हुए नही है बल्कि सुने हुए हैं, जैसे ईशा उपनिषद, यजुर्वेद के ४० वे मंडल का हिस्सा है, अन्य उपनिषद स्वाधीन हैं किसी ब्रह्मण या क्रिया के लेखन नही हैं, पर कोई कारण नही की उन्हें अन्य भाग से स्वतंत्र न माना जाय | उपनिषद को अरण्यक भी कहा गया है मतलब जंगल बुक |

अतः वेदांत व्यवहार में हिन्दुओं का धार्मिक ग्रन्थ कहा जाता है, सब रुढ़िग्रस्त सिद्धांत ही इसकी नींव बताई जाती है, जैन, बुद्ध भी जब अपनी जरुरत हो तो वेदांत के मन्त्रों को उधृत करते हैं, अतः जितने भी संप्रदाय है सब वेद एवं वेदांत का सहारा लेते है | तत्वज्ञान की प्रत्येक कार्यशाला भारत में वेदों की निति से ही उपजी बताई जाती हैं, अंत में व्यास का नियम वेदांत के सिद्धांत के सम्भावों का उद्धरण है, जो की पूर्वोत्तर सिद्धांत संख्य एवं न्याय के प्रतिकूल है, अतः वेदांत सूत्र को व्यास सूत्र भी कहा जाने लगा, व्यास सूत्र को भी विभिन्न लोगोंने विभिन्न तरीके से परिभाषित किया, निष्कर्ष स्वरुप यह कहा जा सकता है की तीन प्रकार के सिद्धांत परिलक्षित होते हैं, द्वेत, विशिष्ट अद्वैत और तीसरा अद्वैत, द्वैत एवं विशिष्ट अद्वैत ज्यादातर भारतियों को दर्शाता है, अद्वैत बहुत कम लोगों को | मैं अब तीनो समुदाय

के अन्तर्निहित सिधान्तो को बताने का प्रयत्न करूँगा, परन्तु आरंभ करूँ उस से पहले बतला दूँ वेदांत दर्शन एक विशेष सोच सांख्य सोच के अंतर्गत ही चलते हैं, मामूली बातों को छोड़ दें तो सांख्य मनोविज्ञान न्याय एवं वैशेशिका विचार जैसा ही है |